

त्रिधा वैराग्यमासाद्य सोऽपि श्रीविमलासुतः। दीक्षामादाय जैनेन्द्रीं स्वर्गमोक्षसुखप्रदाम् ॥१७॥
 मुनिर्भूत्वा विशुद्धात्मा तपः कुर्वन्मनोहरम्। भव्यान्सम्बोधयन्नुच्चैर्विहरंश्च महीतले ॥१८॥
 सौरीपुरोत्तरे भागे यमुनाया लसत्तटे। शुक्लध्यानेन कर्मारि-लोकालोकप्रकाशकम् ॥१९॥
 केवलज्ञानमुत्पाद्य भूत्वा त्रैलोक्यपूजितः। मुक्तिं संप्राप्तवान्स्वामी सोऽस्माकं शान्तयेस्तु वै ॥२०॥
 स श्रीमान्भवसिन्धुतारणपरः सत्केवलज्ञानभाक् कर्मारतिविनाशकृच्छिवपतिर्देवेन्द्रवृन्दार्चितः।
 लोकालोकविलोकनैकचतुरः स्वर्गापवर्गप्रदो भूयान्मे भवतां च पूजितपदः सच्छ्रेयसे श्रीजिनः ॥२१॥

इति कथाकोशे सुदृष्टेराख्यानं समाप्तम्।

७९. धर्मसिंहमुनेराख्यानम्

सर्वदेवेन्द्रचन्द्राद्यै-र्वन्दितं श्रजिनेशिनम्। नत्वा श्रुताब्धिमाप्तं च धर्मसिंहकथां ब्रूवे ॥१॥
 दक्षिणादिपथे ख्याते कौशलादिगिरौ पुरे। वीरसेनो महीनाथो राज्ञी वीरमती सती ॥२॥
 चन्द्रभूतिस्तयोः पुत्रश्चन्द्रश्रीश्च सुताभवत्। रूपलावण्यसौभाग्यमण्डिता यौवनाश्रिता ॥३॥
 कौशलाख्ये तथा देशे पुरे कौशलनामनि। धर्मसिंहो महाराजस्तां कन्यां परिणीतवान् ॥४॥

इधर विमला के लड़के को भी अत्यन्त वैराग्य हुआ। वह स्वर्ग-मोक्ष के सुखों को देने वाली जिनदीक्षा लेकर योगी बन गया। यहाँ से फिर यह विशुद्धात्मा धर्मोपदेश के लिए अनेक शहरों में घूम-फिर कर तपस्या करता हुआ और अनेक भव्यजनों को आत्महित के मार्ग पर लगाता हुआ शौरीपुर के उत्तर भाग में यमुना के पवित्र किनारे पर आकर ठहरा। यहाँ शुक्लध्यान द्वारा कर्मों का नाश कर इसने लोकालोक का ज्ञान कराने वाला केवलज्ञान प्राप्त किया और संसार द्वारा पूज्य होकर अन्त में मुक्ति लाभ किया। वे विमला-सुत मुनि मुझे शान्ति दें ॥१७-२०॥

वे जिन भगवान् आप भव्यजनों को और मुझे मोक्ष का सुख दें, जो संसार-सिन्धु में डूबते हुए, असहाय-निराधार जीवों को पार करने वाले हैं, कर्म-शत्रुओं का नाश करने वाले हैं, संसार के सब पदार्थों को देखने वाले केवलज्ञान से युक्त हैं, सर्वज्ञ हैं, स्वर्ग तथा मोक्ष का सुख देने वाले हैं और देवों, विद्याधरों, चक्रवर्तियों आदि प्रायः सभी महापुरुषों से पूजा किए जाते हैं ॥२१॥

७९. धर्मसिंह मुनि की कथा

इस प्रकार के देवों द्वारा जो पूजा-स्तुति किए जाते हैं और ज्ञान के समुद्र हैं, उन जिनेन्द्र भगवान् को नमस्कार कर धर्मसिंह मुनि की कथा लिखी जाती है ॥१॥

दक्षिण देश के कौशलगिर नगर के राजा वीरसेन की रानी वीरमती के दो सन्तान थीं। एक पुत्र और एक कन्या थी। पुत्र का नाम चन्द्रभूति और कन्या का चन्द्रश्री था। चन्द्रश्री बड़ी सुन्दर थी। उसकी सुन्दरता देखते ही बनती थी। कौशल देश और कौशल ही शहर के राजा धर्मसिंह के साथ चन्द्रश्री का विवाह हुआ था। दोनों दम्पति सुख से रहते थे। नाना प्रकार की भोगोपभोग वस्तुएँ सदा

तया साद्धं महाभोगान्स भुञ्जानः स्वपुण्यतः। दानपूजादिसत्कर्मतत्परः सुचिरं स्थितः ॥५॥
 एकदा स महीनाथो धर्मसिंहो विशुद्धधीः। नत्वा दमधराचार्यं मुनीन्द्रं सत्तपोनिधिम् ॥६॥
 धर्ममाकर्ण्य जैनेन्द्रं सुरेन्द्राद्यैः समर्चितम्। त्रिधा वैराग्यमासाद्य मुनिर्जातो गुणोज्ज्वलः ॥७॥
 चन्द्रश्रीभगिनीं वीक्ष्य दुःखितां चन्द्रभूतिना। हठादसौ समानीय तस्याश्चैव समर्पितः ॥८॥
 गत्वा सोपि पुनर्दीक्षां समादाय प्रवेगतः। मुनिर्भूत्वा महाघोरं करोति स्म सुधीस्तपः ॥९॥
 तथैकदा समालोक्य चन्द्रभूतिं दुराशयम्। आगच्छन्तं मुनीन्द्रोसौ धर्मसिंहो गुणाकरः ॥१०॥
 पुनर्मैऽसौ तपोभङ्गं कारयिष्यति मानसे। संविचार्य तदा शीघ्रं व्रतरक्षणहेतवे ॥११॥
 संप्रविश्य विशुद्धात्मा मृतहस्तिकलेवरम्। संन्यासेन ततो मृत्वा स्वर्गलोकं सुधीर्ययौ ॥१२॥
 अहो भव्यैः प्रकर्तव्यं कष्टेऽपि व्रतरक्षणम्। येन सौख्यं भवेदुच्चैः स्वर्गमोक्षादिसंभवम् ॥१३॥
 श्रीमज्जैनविशुद्धधर्मरसिकः श्रीधर्मसिंहो मुनिः कृत्वा सारतपो जिनेन्द्रगदितं स्वर्गापवर्गप्रदम्।
 प्राप्तः स्वर्गसुखं प्रसिद्धमहिमा तत्पुण्यतो निर्मलं स श्रीमान्गुणरत्नरंजितमतिः कुर्याच्च मे मंगलम् ॥१४॥

इति कथाकोशे धर्मसिंहमुनेराख्यानं समाप्तम्।

उनके लिए मौजूद रहती थी। इतना होने पर भी राजा का धर्म पर पूर्ण विश्वास था, अगाध श्रद्धा थी। वे सदा दान, पूजा, व्रतादि धर्म कार्य करते थे ॥२-५॥

एक दिन धर्मसिंह तपस्वी दमधर मुनि के दर्शनार्थ गए। उनकी भक्ति से पूजा-स्तुति कर उन्होंने उनसे धर्म का पवित्र उपदेश सुना, जो धर्म देवों द्वारा भी बड़ी भक्ति के साथ पूजा जाता है। धर्मोपदेश का धर्मसिंह के चित्त पर बड़ा गहरा असर पड़ा। उससे वे संसार और विषय-भोगों से विरक्त हो गए और मुनि दीक्षा ले ली। उनकी रानी चन्द्रश्री को उन्हें जवानी में दीक्षा ले जाने से बड़ा कष्ट हुआ। पर बेचारी लाचार थी। उसके दुःख की बात जब उसके भाई चन्द्रभूति को मालूम हुई तो उसे भी अत्यन्त दुःख हुआ। उससे अपनी बहिन की यह हालत न देखी गई। उसने तब जबरदस्ती अपने बहनों धर्मसिंह को उठा लाकर चन्द्रश्री के पास ला रखा। धर्मसिंह फिर भी न ठहरे और जाकर उन्होंने पुनः दीक्षा ले ली और महा तप तपने लगे ॥६-९॥

एक दिन इसी तरह वे तपस्या कर रहे थे। तब उन्होंने चन्द्रभूति को अपनी ओर आता हुआ देखा। उन्होंने समझ लिया कि यह फिर मेरी तपस्या बिगाड़ेगा। सो तप की रक्षा के लिए पास ही पड़े हुए मृत हाथी के शरीर में घुसकर उन्होंने समाधि ले ली और अन्त में शरीर छोड़कर वे स्वर्ग में गए। इसलिए भव्यजनों को कष्ट के समय भी अपने व्रत की रक्षा करनी चाहिए। जिससे स्वर्ग या मोक्ष का सर्वोच्च सुख प्राप्त होता है ॥१०-१३॥

निर्मल जैनधर्म के प्रेमी श्रीधर्मसिंह मुनि ने जिन भगवान् के उपदेश किए और स्वर्ग-मोक्ष के देने वाले तप मार्ग का आश्रय ले उसके पुण्य से स्वर्ग-सुख लाभ किया। वे संसार प्रसिद्ध महात्मा और अपने गुणों से सबकी बुद्धि पर प्रकाश डालने वाले मुझे भी मंगल-सुख दान करें ॥१४॥

८०. वृषभसेनस्याख्यानम्

नत्वा जिनं जगत्पूज्यं स्वर्गमोक्षसुखप्रदम्। वक्ष्ये वृषभसेनस्य सच्चरित्रं सतामिदम् ॥१॥
 पुरे पाटलिपुत्राख्ये श्रेष्ठी वृषभदत्तवाक्। धनैर्धान्यैश्च सम्पूर्णः पूर्वपुण्येन शुद्धधीः ॥२॥
 भार्याभूद्वृषभश्रीश्च पुत्रो वृषभसेनकः। श्रीजिनेन्द्र पदाम्भोजमहासेवाविधायकः ॥३॥
 तन्मातुलो धनपतिः श्रीकान्ताकामिनीपतिः। तयोः सद्रूपसंयुक्ता धनश्रीश्चारुकन्यका ॥४॥
 तां श्रीवृषभसेनोसौ परिणीय महोत्सवैः। भुञ्जानो विविधान्भोगान्सुधीः सौख्येन संस्थितः ॥५॥
 एकदा दमधरस्य मुनेः पार्श्वे सुभक्तितः। श्रुत्वा धर्मं जिनन्द्रोक्तं मुनिः शीघ्रं बभूव च ॥६॥
 धनश्री रोदनं चक्रे ततोसौ मातुलेन च। गृहमानीय कष्टेन कारितो व्रतखण्डनम् ॥७॥
 अहो मोहयुतो जन्तु कार्याकार्यं न पश्यति। मत्तवत्कुरुते कर्मभूरिपापविधायकम् ॥८॥
 स श्रीवृषभसेनस्तु कारागारे यथा नरः। गृहे स्थित्वा कियत्कालं संजातश्च मुनिः सुधीः ॥९॥

८०. वृषभसेन की कथा

स्वर्ग और मोक्ष का सुख देने वाले तथा सारे संसार के द्वारा पूज्य-माने जाने वाले श्री भगवान् को नमस्कार कर वृषभसेन की कथा लिखी जाती है ॥१॥

पाटलिपुत्र (पटना) में वृषभदत्त नाम का एक सेठ रहता था। पूर्व पुण्य के प्रभाव से इसके पास धन सम्पत्ति खूब थी। उसकी स्त्री का नाम वृषभदत्ता था। उसके वृषभसेन नाम का सर्वगुण-सम्पन्न एक पुत्र था। वृषभसेन बड़ा धर्मात्मा और सदा दान-पूजादिक पुण्यकर्मों का करने वाला था ॥२-३॥

वृषभसेन के मामा सेठ धनपति की स्त्री श्रीकान्ता के एक लड़की थी। उसका नाम धनश्री था। धनश्री सुन्दरी थी, चतुर थी और लिखी-पढ़ी थी। धनश्री का ब्याह वृषभसेन के साथ हुआ था। दोनों दम्पति सुख से रहते थे। नाना प्रकार के विषय-भोगों की वस्तुएँ उनके लिए सदा हाजिर रहती थी ॥४-५॥

एक दिन वृषभसेन दमधर मुनिराज के दर्शनों के लिए गया। भक्ति सहित उनकी पूजा-वन्दना कर उसने उनसे धर्म का पवित्र उपदेश सुना। उपदेश उसे बहुत रुचा और उसका प्रभाव भी उस पर बहुत पड़ा। वह उसी समय संसार और भ्रम से सुख जान पड़ने वाले विषय-भोगों से उदासीन हो मुनिराज के पास आत्महित की साधक जिनदीक्षा ले गया। उसे युवावस्था में ही दीक्षा ले जाने से धनश्री को बड़ा दुःख हुआ। उसे दिन-रात रोने के सिवा कुछ न सूझता था। धनश्री का यह दुःख उसके पिता धनपति से न सहा गया। वह तपोवन में जाकर वृषभसेन को उठा लाया और जबरदस्ती उसकी दीक्षा वगैरह खण्डित कर दी, उसे गृहस्थ बना दिया। सच है, मोही पुरुष करने और न करने योग्य कर्मों का विचार न कर उन्मत्त की तरह हर एक काम करने लग जाता है, जिससे कि पापकर्मों का उसके तीव्र बन्ध होता है ॥६-८॥

जैसे मनुष्य को कैद में जबरदस्ती रहना पड़ता है उसी समय वृषभसेन को भी कुछ समय तक